चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

मूल्य ४।।

. 1949

6

किसी समय एक देश में एक खूँखार राक्षसी रहती थी। वह सारे भू-मण्डल में घूमती फिरती थी और क्रूरता से आदमियों और जानवरों को मार कर खा जाती थी। उस राक्षसी का नाम सुनते ही लोग काँप उठते थे। उसके डर से लोगों ने शहर बाजार में घूमना फिरना भी छोड़ दिया। हरदम दरवाजा लगाए घरों में बैठे रहते थे। लेकिन आखिर कोई कितने दिन इस तरह रहता ? दाना-पानी के बिना तो कोई जी नहीं सकता था। अगर लोग बाजार न जाते, खेतों में काम न करते, तो जीविका कैसे चलती ? लेकिन बाहर जाने से जान का खतरा था। इस तरह लोगों की हालत साँप -छछून्दर सी हो गई। वह घरों में बन्द भूख प्यास से तड़प तड़प कर मरने लगे।

लोगों को इस तरह तकलीफ उठाते देखकर सूर्य भगवान को बड़ी दया आई। वे रोज सवेरे जब अपने सात घोड़े वाले रथ पर बैठकर पूर्व से निकलते तो उन्हें पृथ्वी पर हाहाकार के शब्द सुनाई पड़ते।और उनके मन में बड़ा कष्ट होता। आखिर उन्होंने तय कर लिया कि किसी न किसी उपाय से इन बेचारों का कष्ट दूर करना चाहिए।

दूसरे दिन सूरज महाराज ने अपनी चमचमाती हुई तलवार बाहर निकाली और उसे अपनी कमर में लटका लिया। पीठ पर तरकश बाँध लिया और एक हाथ में धनुष ले लिया। फिर उन्होंने अपने सात घोड़े वाले रथ पर बैठते हुए सोचा - "चाहे जो कुछ भी हो, आज मैं जरूर उस राक्षसी को

रामशरण शुक्ल

मार डालूँगा। अब मैं अधिक दिन तक लोगों के कष्ट नहीं देख सकता।

महाराज सीधे धरती पर उतरे और राक्षसी को खोज कर उसके सामने गए। उन्होंने उसे ललकारा और धनुष पर एक ऐसा तीर चढ़ा कर मारा कि वह हाय ! हाय ! करने लगी। लेकिन यह भी कोई मामूली राक्षसी तो थी नहीं। बस मुँह बाए महाराज को निगलने दौड़ी। दोनों में बड़ी देर तक लड़ाई हुई। राक्षसी के पास कोई हथियार नहीं था, तो भी उसने अपने पहने नखों से सूरज महाराज को घायल कर दिया।

आखिर बड़ी देर के बाद सूरज महाराज ने गुस्से में आकर अपनी तलवार निकाली और एक ऐसा हाथ जमाया कि राक्षसी का सिर धड़ से अलग हो धरती पर जा गिरा और लुढ़कने लगा। बेचारे महाराज इस युद्ध में बहुत थक गए थे। लेकिन उन्हें खुशी इस बात की थी कि लोगों के सर से एक बला टल गई।

अब थके माँदे सूरज महाराज ने सोचा -"चलो, थोड़ी देर इस नदी के किनारे टहलकर अपनी थकान मिटा लूँ। वहीँ पास ही एक नदी थी। सूरज महाराज उसके किनारे किनारे टहलने लगे।

थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या दिखाई दी। "आह ! यह लड़की देखने में कितनी सुन्दर है ! अगर मैं इसे अपनी रानी बना लूँ तो बड़ा अच्छा हो।" उन्होंने मन ही मन सोचा। वे उसकी और एकटक देखते हुए वहीं खड़े रह गए। फिर किसी तरह अपने आप को सम्भाल कर उस लड़की के पास गए और कहने लगे - "सुन्दरी ! शायद तुम मुझे

नहीं जानती। मैं ही सूरज हूँ। मैं ही सारे संसार को रोशनी देता हूँ। आसमान में मेरा ही राज है। वहीं मेरा सोने का किला है जिसके फाटकों पर मोतियों की झालरें लटकते हैं। सुन्दर देव-कन्याएँ उन द्वारों की रखवाली करती हैं। मैं अपने सात घोड़े वाले रथ पर सवार होकर रोज आसमान में घूमा करता हूँ। क्या तुम भी मेरे साथ मेरे राज में आओगी ? मैं तुम्हें अपनी रानी बनाऊँगा। फिर तुम्हें संसार में किसी चीज की कमी न रहेगी। बोलो, क्या तुम मेरे साथ चलना पसन्द करोगी ?

वह लड़की बड़ी लजीली थी। तिस पर उसे कभी पराए लोगों से बातचीत करने की आदत न थी। वह अपने घर और अपने माँ-बाप को छोड़कर एक पल भी नहीं जी सकती थी। उस नदी के किनारे एक छोटी सी कुटिया ही उसका राजमहल थी। जङ्गल में पशु-पक्षी ही उसकी सहेलियाँ थे। दिन-रात फुल चुनकर गूँथना ही उसका काम था। यह सब छोड़ कर वह सूरज महाराज के साथ कैसे जाती? इसलिए वह चुपचाप सिर झुकाए खड़ी रही।

सूरज महाराज ने उसे अनेक तरह से समझाया। आखिर यह गिड़गिड़ाने भी लगे। लेकिन उस लड़की ने कोई जवाब ना दिया। उल्टे वह दौड़कर वहाँ से भागने लगी। लेकिन महाराज उसके पीछे दौड़ते हुए बार-बार कहने लगे -"लड़की ! तुम भागती क्यों हो ? डरो नहीं ! मैं तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ूँगा। तुम मेरे साथ चलो। मेरी रानी बनो। तुम जो कुछ माँगोगी सो सब ला दूँगा। लेकिन उस लजीली लड़की ने

उनकी एक न सुनी। वह सिर झुकाए उसी तरह भागती रही। लेकिन सूरज महाराज ने भी उसका पीछा न छोड़ा। वह और भी तेजी से दौड़कर उसके पास पहुँच गए और हाथ फैला कर उसे पकड़ लेने की कोशिश करने लगे। अब तो उस लड़की के होश उड़ गए और उसने चिल्ला कर अपने पिता को पुकारा -"बाबूजी ! बाबूजी !"

जब उसके पिता वरुण-राज ने बड़ी दूर से उसकी चिल्लाहट सुनी, तो उन्होंने समझ लिया कि उनकी कन्या पर कोई सङ्कट आ पड़ा है। मनुष्य रूप में रहने से यही जोखिम है। फिर सुन्दरी कन्या को देखने से तो सबका मन ललचा जाता है। यह सब सोच कर उन्होंने मन ही मन एक मन्त्र पढ़ा और पलक झपकते वह लड़की एक तमाल वृक्ष में बदल गई। यह देखकर सूरज महाराज को बड़ा अचरज हुआ। साथ-साथ उन्हें निराशा भी हुई।

"अब पछताने से क्या फायदा ! कहाँ मैंने सोचा था कि तुम्हें अपनी रानी बनाऊँ और कहाँ तुम एक पेड़ बन बैठी ! लेकिन अब भी तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम नहीं घटा। बल्कि वह और भी बढ़ गया है। जाओ , मैं तुम्हें एक वर देता हूँ जिससे तुम्हारा पत्ते हमेशा हरे बने रहेंगे। मैं हमेशा तुम्हें अपने शीश पर धारण करूँगा।" सूरज महाराज ने आँखों में आँसू भरकर कहा। उसी दिन से वे अपने शीश पर तमाल के पत्तों से निर्मित मुकुट पहनने लगे।

पुराने जमाने में जापानी लोग आईना देखना नहीं जानते थे। इसलिए उनमें से कोई नहीं जानता था कि उसकी सूरत देखने में कैसी लगती है।

इस जमाने में जापान के गाँव में एक किसान रहा करता था। उसे एक दिन राह में चलते-चलते धूल से भरा हुआ आईने का एक टुकड़ा मिला। उसे उठाकर उसने हाथ में लिया और झाड़ पोंछकर जेब में रख लिया। घर पहुँचने के बाद वह फिर उसे जब से निकलकर उलट-पुलट कर देख रहा था कि अचानक उसे अपनी शक्ल दिख गई। लेकिन वह किसान तो जानता नहीं था कि वह सूरत उसी की है।

"कौन है या एकटक मेरी और देख रहा है ?" उसे बड़ा अचरज हुआ। आखिर बहुत सोच विचारने के बाद उसने तय किया कि वह सूरत और किसी की नहीं बल्कि उसके पिताजी की है जो उसके बचपन में ही स्वर्ग सिधार गए थे। उसके मन में सन्देह पैदा हुआ। इतने दिनों बाद आज वह क्यों मेरी सुध लेने आए हैं? शायद उन्हें मुझ पर गुस्सा हो गया है कि मैं उन्हें भूल गया हूँ। इसी से अपनी याद दिलाने आए हैं। यह सोचकर वह बहुत पछताया और मन ही मन पिता को बार-बार प्रणाम करने लगा।

लेकिन उसे न सूझा कि आईने के टुकड़े को क्या करे। अगर फेंक देगा तो शायद पिता गुस्सा होंगे। यह सोचकर उसने उसे एक रुमाल में लपेटकर हिफाजत से एक सन्दूक में बन्द कर दिया जिससे उसकी घरवाली उसे न देख सके। वह हर रोज अपनी औरत से छुपा कर दिन में दो एक बार सन्दूक खोलता और पिता का दर्शन करके फिर बन्द कर देता।

एक दिन उसकी हरकत उसकी औरत ने देख ली। वह किसान पहले

कभी सन्दूक में ताला न लगाता था। लेकिन अब वह ताला लगने लगा था। अकेले में सन्दूक खोलकर बार-बार देखने लगा था। इन सब बातों से उसकी औरत के मन में शक पैदा हो गया। वह सोचने लगी कि हो ना हो उसके पति ने उस सन्दूक में जरूर कोई अनूठी चीज छुपा रखी है। इसलिए वह वैसे ही और एक चाबी कहीं से ले आई और एक दिन जब उसका पति घर में नहीं था, सन्दूक खोलकर देखी। लेकिन उसमें उस काँच के टुकड़े के सिवा और क्या खाक धारा था ? वह भी उस टुकड़े को उलट-पुलट कर देखने लगी तो उसमें एक औरत की झलक दिख पड़ी। बस ,उसने समझा कि उसके पति ने किसी पराई औरत की तस्वीर छुपा कर रख छोड़ी है। यह सोचते ही वह गुस्से में तमतमा उठी। अब हर रोज वह आईने में अपनी सूरत देखती और बड़बड़ाने लगती - "कैसी भद्दी है यह औरत ! इसी काली कलूटी पर महाशय लट्टू हो गए हैं। " इस चिन्ता से उसके मुँह पर झुर्रियाँ पड़ गईऔर वह बूढी सी दिखने लगी। एक दिन उसे रहा न गया। उसका सारा शरीर क्रोध से काँपने लगा। झल्लाकर वह इस ताक में बैठी रही कि कब उसका पति घर आए और कब से जली कटी सुना कर अपने मन की जलन बुझाए।

उसका पति दोपहर को घर लौटा। वह घर में पाँव ही रख पाया था कि उसकी औरत चिल्ला कर बोली -"मैं अभी मायके चली जाती हूँ। तुम उसी कपटी को लेकर घर में रहो और मौज उड़ाओ। " उसका पति हक्का-बक्का सा सब कुछ सुनता रहा। उसकी समझ में कुछ भी न आया। गिड़गिड़ा कर पूछने लगा-"आखिर बात क्या है ? बताओ भी तो !" उसके बहुत कुछ मनाने पर औरत ने आईने का हाल सुना दिया। वह सुनकर उसके अचरज का ठिकाना न रहा।

"क्या कहा ? उसमें एक औरत है ? तो क्या उसमें मेरे पिताजी नहीं हैं?" उसने घबरा कर पूछा।

"वाह ! वाह ! यह बहाना तो खूब बनाया। पिताजी ? अच्छा हुआ कि दादाजी का नाम न लिया। जरा एक बार देखा तो को कि कौन है इसमें। यह कह कर उसने आईना लाकर उसके सामने पटक दिया। किसान ने देखा तो उसे फिर अपने पिताजी का चेहरा दिखाई दिया। खुशी से उछल कर बोला -"जरा तुम ही देखो तो कि कौन है इसमें। यही तो पिताजी हैं। " जब औरत ने झाँका तो उसे अपना ही चेहरा दिखाई दिया। अब क्या था ! गुस्से से आग-बबूला होकर तुरन्त उठ खड़ी हुई और मायके की ओर चल पड़ी।

उसका पति गिड़गिड़ाता हुआ उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। रास्ते में दोनों की एक क़ाज़ी से भेंट हो गई। उसने इन दोनों को देखते ही पूछा -"क्या बात है ? क्यों आपस में झगड़ रहे हो ?" औरत मर्द दोनों ने अपनी-अपनी बात कह सुनाई और अन्त में कहा कि क़ाज़ी जो फैसला करेगा दोनों खुशी से मान लेंगे। किसान ने आईने का वह टुकड़ा क़ाज़ी के हाथ में रख दिया।

अब क़ाज़ी ने उसको उठा कर देखा तो उसमें उसे एक बुड्ढा झुर्रीदार चेहरा लिए दिखाई दिया। क़ाज़ी ने पिछले साल एक बुड्ढे को फाँसी की सजा सुनाई थी। बस ,उसने समझा कि यह उसी बुड्ढे का चेहरा है। उसने उन दोनों से कहा -"तुम लोग क्यों नाहक आपस में झगड़ते हो ? इसमें तो न कोई औरत है न किसी के पिताजी। इसमें तो वह बुड्ढा है जिसे मैंने पिछले साल फाँसी का हुक्म सुनाया था। " यह कहकर उसने वह आईने का टुकड़ा अपनी जेब में रख लिया और चलता बना।

पति-पत्नी खुशी वहाँ से अपने घर लौट आए।
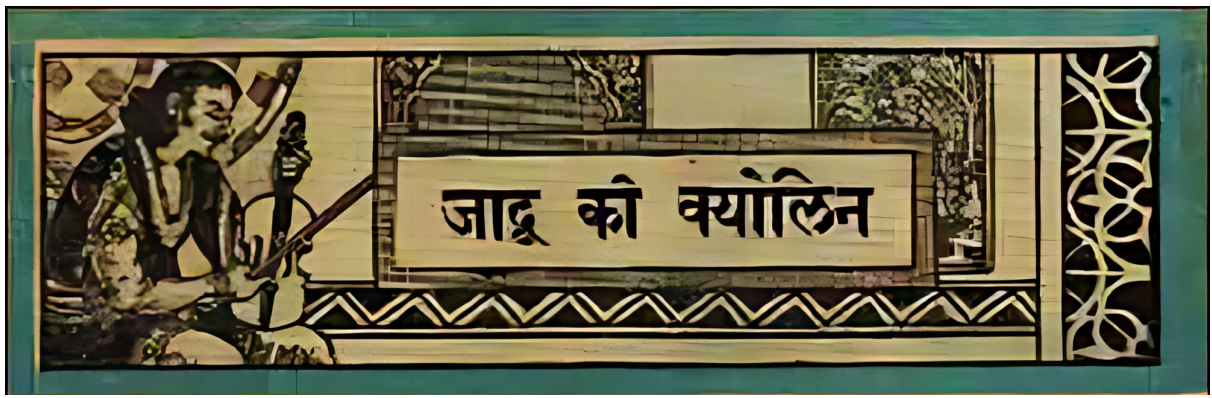
एक राजा था। उसको गाने बजाने का बड़ा शौक था। उसके दरबार में बड़े-बड़े गबैये और उस्ताद रहते थे। राजा उनको बड़ी-बड़ी तनख्वाह देता था और रोज एक-दो घण्टे उनसे सङ्गीत सीखा करता था। लेकिन इस तरह बहुत कोशिश करने पर भी राजा को गाना बजाना न आया। राजा ने नए-नए उस्ताद बुलाए। तो भी कुछ फायदा न हुआ।

तब राजा ने निराश होकर गाने की कोशिश छोड़ दी और सिर्फ बजाना सीखने लगा। तरह-तरह के बाजे मँगवाई और साथ-साथ बजाने वाले भी। इस तरह फिर बहुत सा रुपया खराब हुआ; लेकिन उसका भी कुछ फल न निकला। अब राजा बहुत उदास हो गया। उसने सोचा -"मैंने राज के इतने रुपए मिट्टी कर दिए। इतनी तकलीफ उठाई। राज का छोड़कर गाने बजाने के पीछे पड़ा रहा। लेकिन मैं सीख क्या पाया ? कुछ भी नहीं। लोग जब यह सब जान पाएँगे तो क्या कहेंगे ? क्या वे मेरी हँसी नहीं उड़ाएँगे ?" इस फिक्र में राजा खाना पीना भी भूल गया। उसे रात दिन सोते जागते एक ही सोच लगा रहा कि वह गाना बजाना क्यों कर सिख सकेगा।

एक रात को जब राजा यही सब सोचते सोचते सो गया, तो उसे सपने में एक देवी दिख पड़ी और उसने कहा -"राजा ! मैं जानती हूँ कि तुम्हें कौन सी चिन्ता सता रही है। तुम्हारा हाल देखकर मेरा मन पिघल गया है। इसलिए मैं तुम्हारी मदद करने आई हूँ। देखो, मैं तुम्हें एक जादू की

क्योलिन देता हूँ। इसको बजाने में तुम्हें कुछ भी तकलीफ न होगी। बस, तारों पर कमान धर दो और आप ही आप वह क्योलिन बजने लगेगी और इसमें से ऐसी मनोहर तानें निकलेंगे कि सुनने वालों पर मन्त्र सा चल जाएगा। इस क्योलिन में और एक विशेषता भी है। जिसके सामने यह बजेगी, वह आदमी बिना कुछ कहे सुने नाचने लगेगा और तब तक नाचता रहेगा जब तक क्योलिन का बजना बन्द न हो जाए। लो यह क्योलिन। सुख से रहो। मैं जाती हूँ। " यह कहकर उस देवी ने वह क्योलिन राजा के सिरहाने रख दी और अदृश्य हो गई।

राजा चौक कर उठा तो देखता क्या है कि सिरहाने क्योलिन रखी है। अचरज के साथ उसने उसे उठाया और बजाने लगा। उससे ऐसे मधुर गाने निकालने लगे कि राजा को अपने कानों पर आप ही विश्वास न हुआ।

धीरे-धीरे राजा को सपने की सारी बातें याद आ गई। देवी का आना, ढाँढस बँधाना, और जाते वक्त क्योलिन

सिरहाने रख देना, सब कुछ चित्र की तरह उसकी आँखों के आगे नाचने लगा। राजा को अपने सपने पर पूरा विश्वास हो गया। उसने पहरेदार को बुलाया। पहरेदार आकर उसके सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। राजा क्योलिन उठाकर बजाने लगा। बस !अब क्या था ? पहरेदार राजा के सामने नाचने लग गया। राजा को बड़ी खुशी हुई। वह और भी जल्दी-जल्दी बजाने लगा। नौकर और भी तेजी के साथ नाचने लगा। आखिर नाचते नाचते वह थक गया और उसके हाथ पैर दुखने लगे। वह रुकना चाहता था, लेकिन रुक न सकता था। बेचारे राजा से गिड़गिड़ाकर कहने लगा -"महाराज ! मालूम होता है किसी ने मुझ पर जादू कर दिया है। मेरे पैर दर्द कर रहे हैं। अगर थोड़ी देर और नाचता रहा तो मैं बेहोश होकर गिर जाऊँगा। कोई उपाय करके इस बला से मेरा पिण्ड छुड़ा दीजिए। राजा को उस बेचारे पर दया आ गई और उसने क्योलिन बजाना बन्द कर दिया। नौकर लड़खड़ाता खड़ा हो गया। उसका सारा बदन पसीने से तर-वतर हो रहा था।

राजा को विश्वास हो गया कि अब कोई उसकी हँसी न उड़ा सकेगा। इसकी सारी उदासी दूर हो गई।

दूसरे दिन सवेरे दरबार में जाते वक्त अपने साथ वह जादू की क्योलिन भी ले गया। थोड़ी देर बाद राजा ने दरबारियों को अपनी क्योलिन दिखाई और धीरे-धीरे उसे बजने लगा। जैसे ही क्योलिन बजी , मन्त्री, सेनापति और सभी दरबारी उठ खड़े हुए और नाचने लग गए। राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। वह और भी जोर-जोर से बजाने लगा। दरबारी और भी तेजी से

नाचने लगे। कुछ ही देर में सब लोग हाँपने लगे और गिड़गिड़ा कर कहने लगे -"महाराज ! और न बजाइए। नहीं तो हमारी जान निकल जाएगी। " तब कहीं जाकर राजा ने क्योलिन बजाना बन्द किया और लोगों की जान में जान आई।

अब राजा के लिए यह खेल बन गया। वह रोज दरबार में क्योलिन ले जाता और घण्टे दो घण्टे दरबारियों को नचा कर अपना मन बहलाता। नाच नाच कर उन लोगों का थक जाना, हाय ! हाय ! करना, चीखना-चिल्लाना और गिड़गिड़ाना देखकर हँसते-हँसते राजा का पेट फूल जाता और वह कहता -"वाह !अच्छा तमाशा है भई !"

एक दिन राजा दरबार में बैठा हुआ था और वह क्योलिन उसकी बगल में रखी हुई थी। थोड़ी देर बाद राजा ने बजाने के लिए क्योलिन ढूँढी तो मालूम हुआ कि वह गायब है। सब दरबारियों की तलाशी ली गई, लेकिन क्योलिन कहीं नहीं मिली। राजा आग बबूला हो गया और कहने लगा -"अगर क्योलिन नहीं मिली, तो सभी को फाँसी पर चढ़ा दूँगा।"
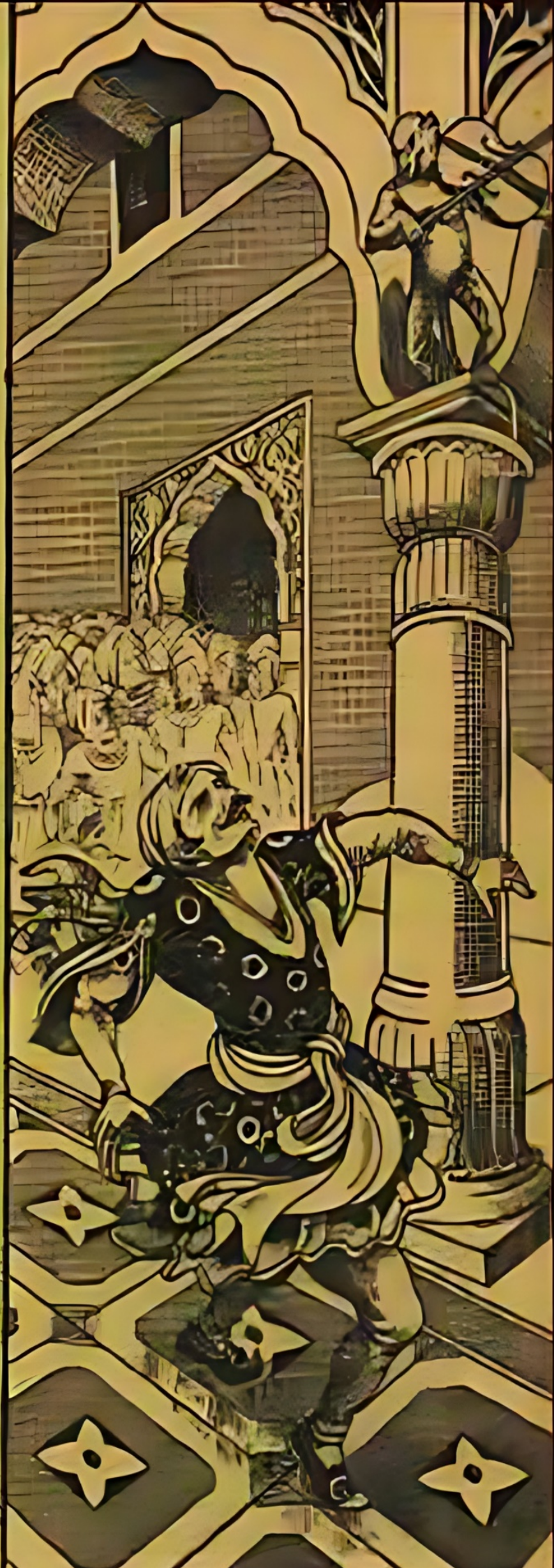
इतने में राजा की नजर एक खम्भे के ऊपर पड़ी। उसने देखा कि क्योलिन एक बन्दर के हाथ में है और वह बन्दर खम्भे पर चढ़ा हुआ है। राजा बड़ा घबराया; लेकिन करता क्या ? इतने में बन्दर क्योलिन बजाने लगा। बजते ही राजा नाचने लगा। आश्चर्य तो यह था की बाकी सभी दरबारी सुख से खड़े थे। बन्दर अब बड़ी तेजी से बजाने लगा। राजा दर्द के मारे चीखता चिल्लाता नाच रहा था। आखिर वह थकावट के मारे बेहोश होकर गिर पड़ा। सभी दरबारी राजा के चारों ओर जमा हो गए और उसे होश में लाने की कोशिश करने लगे। थोड़ी देर के बाद राजा की आँखें खुली और उसने देखा कि बन्दर के बदले उसके सामने वही सपने वाली देवी खड़ी है और उसके हाथ में वही क्योलिन है। राजा का मुँह सफेद पड़ गया।

मुँह बाए क्या देख रहे हो ? महाराज ! मैं वही देवी हूँ। तुम्हें अच्छी सीख मिल गई है । " देवी ने कहा।

"मैंने क्या कसूर किया है ?" राजा ने पूछा।

मैंने तुम पर तरस खा कर यह क्योलिन दी थी। लेकिन तुमने उसका उपयोग किया इन वेचारों को सताने में। अब समझ गए न कि इन वेचारों ने कितनी तकलीफ उठाई होगी।" देवी ने पूछा।

"सचमुच मैंने बड़ा भारी कसूर किया है। इस बार मुझे माफ कर दो देवी। फिर कभी ऐसा ना करूँगा। यह क्योलिन मुझे लौटा दो।" राजा ने गिड़गिड़ा कर कहा।

देवी को राजा पर दया आ गई। उसने क्योलिन उसको लौटा दी और अन्तर्धान हो गई। राजा ने फिर कभी क्योलिन का दुरुपयोग नहीं किया।

सीता अपने माँ -बाप के साथ पड़ोस के गाँव में मेला देखने गई। उस रोज उस गाँव में बड़ा भारी उत्सव हो रहा था। लोग दूर-दूर के गाँव से बैलगाड़ियों पर और पैदल भी चले आ रहे थे। रात उत्सव भी होने वाला था। अच्छी-अच्छी भजन मण्डलियाँ भी आ रही थीं। उस दिन वहाँ मवेशियों की हाट भी लगने वाली थी। इसीलिए लोग अच्छे-अच्छे गाय बैल हाँक कर ले आ रहे थे। दुकानें तरह-तरह की खूबसूरत चीजों से सजी हुई थी। जगह-जगह पर मिठाइयों की दुकान थी। उनमें से पकती हुई चीजों की सौन्धी बास फैल कर लोगों को ललचा रही थी। थोड़ी ही दूर पर मैदान में एक डेरा लगा हुआ था और उसमें तमाशा हो रहा था। उसकी बगल में ही काठ के घोड़े झूल रहे थे।

सीता अपने माँ-बाप के साथ दिनभर वहाँ घूमती फिरती रही। उसने भजन सुन लिए, तमाशे देखे, काठ के घोड़े पर चढ़ी। वह दिन भर आँखें फाड़ फाड़ कर मेला देखते रही। जब उसे भूख लगी तो उसकी माँ ने उसे मिठाई खरीद दी। भीड़ की धक्का मुक्की में वह कहीं छूट न जाए, इस ख्याल से सीता की माँ उसका नन्हा सा हाथ पकड़ कर अपने साथ घूमती रही।

इसी तरह शाम हो गई। लेकिन कहीं अन्धेरा न था। गैस और बिजली की बत्तियों से दिन का सा उजाला हो रहा था। भीड़ पल पल में बढ़ती जाती थी। सीता अपनी माता का हाथ पकड़ कर उस भीड़ में सकपकाई घूम रही थी। एक जगह रामायण गान हो रहा था। सीता बड़े अचरज के साथ यह सब देख रही थी। लेकिन आखिर थी तो एक छोटी लड़की ही ! इस तरह कब तक घूमती रहती ? बेचारी थक गई। उसे बड़े जोर की नींद आने लगी। माँ ने जब यह देखा तो उसने

भीमशहूर चौबे

उसे एक जगह लिटा दिया और खुद उसकी बगल में लेट गई। उस हो-हल्ले में भी आँख मूँदते ही सीता सो गई। बेचारी थकी हुई थी न ! उसकी माँ उसे देखती बैठी रही।

इस तरह दो-तीन घण्टे बीत गए। दो-तीन औरतें बच्चों के साथ वहीं आ पहुँची। इतने में सीता के पिता ने आकर उसकी माँ से कहा - "चलो, यहीं थोड़ी दूर पर भजन हो रहा है। थोड़ी देर तक सुनकर फिर लौट आएँगे। "

"लड़की को छोड़कर कैसे जाऊँ?" सीता की माँ ने पूछा। "हम उसको देखती रहेंगे। तुम जल्दी लौट आना।" बगल की औरतों ने कहा।

सीता की माँ ने सोचा -"जब तक यह जागती है, तब तक में लौट आऊँगी। यह सोचकर वह भजन सुनने चली गई।

आधा घण्टा बीत गया। जिन औरतों ने सीता को देखते रहने का वादा किया था, उन्हें भी नींद आ गई। वह वहीँ लेट गईं और थोड़ी देर में खर्राटे भरने लग गईं।

इतने में सीता जागी और माँ को चारों ओर ढूँढने लगी। लेकिन उसकी माँ वहाँ कहाँ थी? इतने में थोड़ी दूर पर उसे एक औरत दिखाई दी जो दिखने में ठीक उसकी माँ जैसी थी। सीता 'अम्मा' 'अम्मा' चिल्लाती हुई उसकी और दौड़ी। पर वह औरत तब तक भीड़ में ओझल हो चुकी थी। अब सबसे धक्का खाती हुई सीता हर औरत के पास जाती और देखती कि कहीं उसकी माँ तो नहीं है। कुछ औरतों को तो देखकर उसने समझा कि सचमुच उसकी माँ ही है। उसने उनका हाथ भी पकड़ लिया। लेकिन हर बार उसे निराश ही होना पड़ा। रेशमी साड़ियाँ पहने परियों जैसी औरतें वहीं घूम रही थीं। एक से बढ़कर एक खूबसूरत और

सजी-धजी। पर किसी को देखने से उसे खुशी नहीं हुई।

इतने में धीरे-धीरे सवेरा हो चला। सीता भटकते भटकते एक घर के सामने चबूतरे पर बैठ गई और सिसक सिसक कर रोने लगी। इतने में एक बूढ़ा उस घर का दरवाजा खोल कर बाहर आया और अकेली बैठकर रोती हुई सीता को देखा।

"बच्ची !तू कौन है।? यहाँ किस लिए अकेली बैठी रो रही है ?" बूढ़े ने पूछा।

"मैं अपनी माँ को ढूँढ रही हूँ। वह कहीं दिखाई नहीं देती। " सीता ने जवाब दिया।

तुम्हारी माँ का क्या नाम है।? वह कैसी साड़ी पहने हैं ? देखने में कैसी है ?" बूढ़े ने पूछा।

"मेरी माँ देखने में बहुत अच्छी लगती है। वह बहुत सुन्दर है।" सीता ने कहा।

फिर बूढ़े ने बहुत से प्रश्न पूछे जिससे वह उसकी माँ का हुलिया जानकर पता लगा सके। लेकिन सीता ने सिर्फ "मेरी माँ बहुत सुन्दर है। न जाने कहाँ छूट गई।" कहने के सिवा और कोई जवाब न दिया।

इतने में आसपास के बहुत से लोग जमा हो गए। सभी के घर मेला देखने के लिए रिश्तेदार आए हुए थे। उन सबके घर में सुन्दर स्त्रियाँ थी। बूढ़े ने सोचा शायद उन में से किसी की बच्ची होगी। इसलिए वह सीता को साथ लेकर एक-एक घर में गया और उन सब औरतों को दिखाकर सीता से पूछा -"देखो, इनमें से तो कोई तुम्हारी माँ नहीं है ?" लेकिन सीता उनमें से किसी को पहचानती न थी। उसने कहा -मेरी माँ और भी सुन्दर है। "न जाने देखने में वह कैसी परी सी लगती होगी !" बूढ़े ने सोचा। वह सीता को गोद में

ले मेले में चला। वहाँ वह हर खूबसूरत औरत के पास जाता और सीता को दिखाता। लेकिन हर बार सीता कहती -"नहीं ! यह मेरी माँ नहीं है। मेरी माँ और भी सुन्दर है।" आखिर घूमते घूमते बूढ़े का मन उकता गया। वह सीता को लेकर घर लौट आया। फिर उसने उसे नहा-धुला कर खिला-पीला दिया। खाना खाने के बाद सीता फिर चबूतरे पर आकर बैठ गई। उसकी आँखें माँ को देखने के लिए बेचैन थी। वह वहां बैठकर माँ की राह देखने लगी।

साँझ हो गई। मेला देखने वाले धीरे-धीरे घर लौटने लगे। सीता चबूतरे पर बैठी बैठी हर राह चलती औरत को देखकर चौंक उठाती कि शायद उसकी माँ ही है। उसके पास ही वह बूढ़ा और दस पाँच आदमी बैठे हुए थे। वह परेशान थे कि इस लड़की को कैसे उसकी माँ से मिलवाया जाए।

अचानक सीता जोर से "अम्मा" कहकर चिल्लाती हुई भीड़ में दौड़ी। वह एक औरत के पास जाकर पैरों में लिपट गई। उस औरत ने सीता को उठाकर गले से लगा लिया और दुलारने लगी।

सब लोग अचरज के मारे जहाँ के तहाँ रह गए। उन्हें मालूम हो गया कि वही सीता की माँ है। उन्होंने सीता की माँ को एक परी समझ रखा था। लेकिन यह औरत देखने में बड़ी कुरूप थी। दोहरा बद,न रूखी त्वचा, काला कलुटा रङ्ग , गाल पर चेचक के दाग। वाह ! यह कैसी सुन्दरता है?

पर धीरे-धीरे वह समझ गए की सीता ने सच ही कहा था। उसकी नजर में उसकी माँ सचमुच बड़ी सुन्दर थी। तुम ही बताओ बच्चों ! क्या तुमको अपनी माँ देखने में सबसे सुन्दर नहीं लगती ?

किसी जमाने में एक ब्राह्मण रहता था। उसके घर में उसकी माँ और उसकी बीवी भी रहती थी। लेकिन उसकी माँ और बहू में बिल्कुल नहीं बनती थी। वह एक दूसरे की सूरत देखते ही भड़क उठती थी। एक दिन शाम को ब्राह्मण ज्यों ही घर लौटा उसकी बहू ने कहा -"अब मैं इस घर में एक घड़ी भी नहीं रह सकती। तुम अपनी माँ को तुरन्त घर से बाहर निकाल दो। नहीं तो मैं किसी कुएँ में कूद पड़ूँगी।" यह सुनकर ब्राह्मण के होशो-हवास उड़ गए। उसने सोचा -अगर उसकी स्त्री डूब कर मर गई तो सब लोग उसे बुरा भला कहेंगे। इसलिए उसने बिना चूँ-चपड़ किए स्त्री की बात मान ली। उसी रात उसने अपनी माँ को बुलाकर कहा -"माँ , आज मुझे मालूम हुआ है की बहन की तबीयत कुछ खराब है। अच्छा हो अगर तुम जाकर उसे देख आओ।" माँ ने कहा -"जरूर बेटा ! कल सवेरे ही मुझे उसके गाँव पहुँचा दो। नजदीक ही तो है। " मुँह अन्धेरे ही माँ और बेटा चल पड़े। बेटा माँ को जङ्गल की राह से ले गया। बीच जङ्गल में जाकर उसने किसी बहाने माँ को आगे आगे चलने के लिए कहा। जब उसकी माँ कुछ दूर आगे बढ़ गई तो बेटा चुपके से घर भाग गया।

उसकी माँ ने समझा कि वह पीछे-पीछे आ रहा है। पर थोड़ी दूर आने के बाद उसने पीछे मुड़कर देखा तो बेटे का कहीं पता न था। वह रोती-कलपती एक पेड़ के नीचे बैठ गई। थोड़ी देर बाद ग्रीष्म-ऋतु एक स्त्री के रूप में टहलते टहलते वहाँ आई। उस बुढ़िया को देखकर उसने पूछा-"बूढी माँ ! जरा मुझे यह तो बता कि मैं अच्छी हूँ या नहीं। "बूढी माँ ने जवाब दिया -"बिटिया ! तुमसे बढ़कर अच्छी और कौन होगी ?

श्रीकृष्ण गुप्त

तुम्हारा राज में लोग बड़े सुख से रहते हैं। हर जगह शादी ब्याह की धूम मची रहती है। मीठे खरबूजे-तरबूजे मिलते हैं। आम कटहल मिलते हैं। तुम बहुत अच्छी हो बिटिया।" यह सुनकर गर्मी की ऋतु खुशी-खुशी चली गई। फिर बर्षा ऋतु ने जाकर वही सवाल पूछा तो बुढ़िया ने जवाब दिया -"बिटिया ! तुम्हारी बुराई कौन कर सकता है ? तुम्हारी कृपा से तो पानी बरसता है। अगर पानी न मिले तो हम सब प्यासे मर जाएँ। तुम्हारी कृपा से ही कुएँ तालाब सभी पानी से भर जाते हैं। सब जगह हरियाली छा जाती है। तुम तो सबसे अच्छी हो बिटिया।" यह सुनकर वर्षा ऋतु भी चली गई। फिर शिशिर ऋतु ने आकर वही सवाल पूछा। "बेटी ! तुम्हारे बारे में तो कुछ कहने की जरूरत ही नहीं। तुम्हारे राज में सभी लोग लम्बी तानकर सुख से सो जाते हैं। तुम्हारे राज में ही अमरूद खाने को मिलते हैं। तुम तो सबसे अच्छी हो बिटिया।" बुढ़िया ने कहा। इतना कहते ही तीनों ऋतुएँ एक साथ उसके सामने आ खड़ी हुई। तीनों ने मिलकर उस बुढ़िया को वर दिया कि जब वह बातें करेगी तो उसके मुँह से हीरे जड़ेंगे और जब वह हँसेगी तो मोती बरसेंगे। यह वर देने के बाद तीनों ने पलक झपकते ही बुढ़िया को घर पहुँचा दिया।

थोड़ी देर बाद जब बुढ़िया के बेटे-पतोहू बाहर आए तो उसको देखकर सन्न रह गए। आखिर बहू ने कहा -"सास जी ! आप इतनी जल्दी यहाँ कहाँ से आ गई ?" जब सास ने इस बात का जवाब दिया तो उसके मुँह से हीरे झरने लगे। यह देख बहू अचम्भे में आ गई और नीचे बैठकर हीरे बटोरने लगी। वह देखकर सास को हँसी

आ गई और तब उसके मुँह से मोती बरसने लगे। उस दिन से बहू सास की खातिर करने लगी। फिर भी उसके मन में जलन पैदा हो रही थी कि यही हीरे मोती उसकी माँ के मुँह से क्यों नहीं झड़ते। आखिर उसने एक दिन अपने पति को बुलाकर कहा -"आप कल मेरी माँ को भी जङ्गल में छोड़ आइए। वह भी हीरे मोती का रहस्य मालूम कर आएगी।" पतिदेव स्त्री की बात कैसे टालता ! दूसरे दिन वह तड़के उठ और अपनी सास को साथ लेकर जङ्गल चला गया। बीच जङ्गल में पहुँचकर उसने अपनी माँ की तरह ही उसे भी वहीं छोड़ दिया और घर लौट आया। उसकी सास भी उसी पेड़ के नीचे बैठी रही।

थोड़ी देर बाद पहले की तरह ही ग्रीष्म ऋतु ने आकर उससे पूछा -"बूढी माँ ! मैं गर्मी की ऋतु हूँ। बताओ तो मैं अच्छी हूँ या नहीं ?" इस पर बुढ़िया ने जवाब दिया -"हाँ ! हाँ !तुम्हारी अच्छाई तो मैं खूब जानती हूँ। तुम्हारी धूप सबको झुलसा देती है। तिस पर लू भी
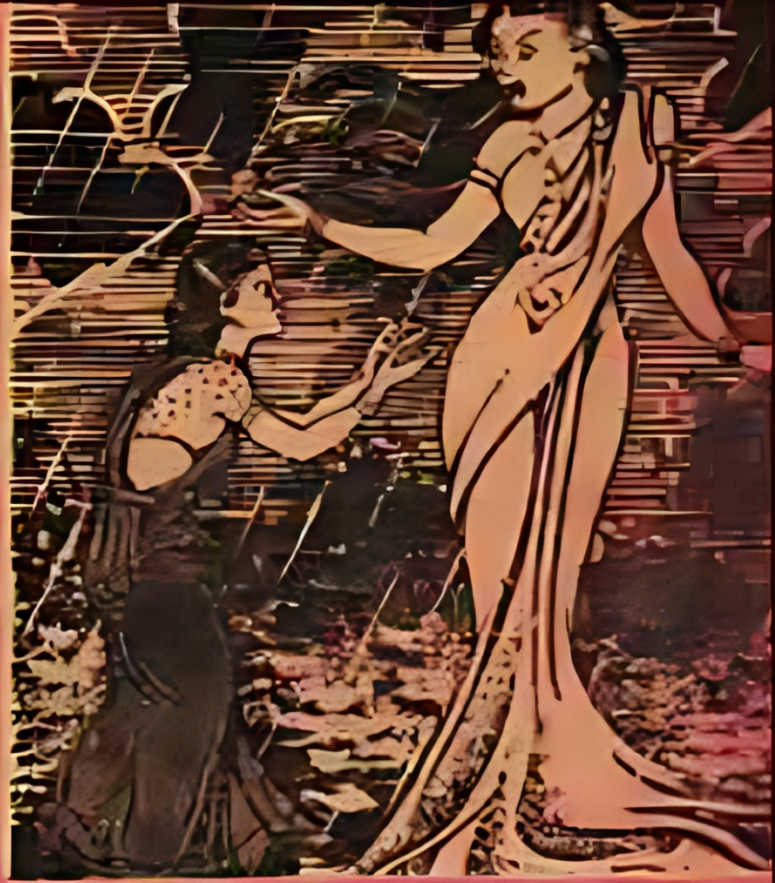
चलने लगती है। भाड़ में जाए तुम्हारी अच्छाई। कहीं पीने को पानी तक नहीं मिलता।" यह सुनकर गर्मी की ऋतु चली गई। फिर बर्षा ऋतु ने जाकर यही सवाल किया।

बुढ़िया ने जवाब दिया -"छी ! बरसात की मौसम भी कोई मौसम है ! एक बार जब बदली छा जाती है तो फिर उससे पिण्ड नहीं छूटता। जहाँ देखो वहीँ पानी और कीचड़। बार-बार पाँव फिसलते हैं। धूप में कपड़े तक नहीं

सुख सकते। घर से बाहर निकलने तक की गुञ्जाइश नहीं। यह सुनकर बर्षा ऋतु भी चली गई।

थोड़ी देर बाद शिशिर ऋतु ने जाकर वही सवाल पूछा "अच्छा बताओ, मेरे बारे में क्या कहती हो ?" बुढ़िया ने जवाब दिया -"तुम कौन सा मुँह लेकर सवाल करने आई हो ? सर्दी के मारे तो सारा शरीर ठिठुर जाता है। दिन तो यूँ ही देखते-देखते बीत जाता है। लम्बी रातें काटे नहीं कटती। खाँसते-खाँसते दम फूल जाता है। तिस पर पूछती हो कि मैं अच्छी हूँ या नहीं। जा, जा !" इतना कहते ही तीनों ऋतुएँ उसके सामने आ खड़ी हुई। तीनों ने उस बुढ़िया को एक गधे का रूप दे दिया। फिर उसे मारते पीटते दामाद के घर के दरवाजे तक पहुँचा दिया। "तुम्हारी जवान बड़ी खराब थी। अब खूब रेंकती रहो। यह कहकर तीनों चली गई।

बेचारे ब्राह्मण की स्त्री रात भर जागकर माँ की राह देखती रही। बेचारी ने सवेरे उठकर जो घर का दरवाजा खोला तो एक गधा सामने दिखाई दिया। उस गधे ने रेंकते हुए अपना सारा हाल के सुनाया। बेचारी बहू को अपनी माँ की हालत देखकर बड़ा दुख हुआ। लेकिन करती क्या ? उसने सोचा -"मेरी माँ की जवान बड़ी तेज चलती थी। शायद यह उसी की सजा है। "

बच्चों ! तुमने कहानी तो सुन ली। अब बोलो तो तुमने इससे क्या सीखा।? तुमने क्या सीखा सो तो नहीं मालूम। लेकिन वह कहानी सुनकर मैंने यही सीखा था -"कभी वह शिकायत नहीं करनी चाहिए कि मौसम खराब है ,मेरा मन नहीं लगता। "

बच्चों ! तुम लोगों ने शरीफा तो खाया ही होगा। इसको बहुत से लोग सीताफल भी कहते हैं। इस तरह का एक रामफल भी होता है। देखने में ऊपर से वह सीताफल जैसा कौड़ीदार नहीं होता। थोड़ा सा फर्क रहता है। लेकिन तोड़ने पर वह अन्दर से ठीक उसी के जैसा रहता है। इसका स्वाद भी ठीक उसी के जैसा होता है। आओ हम तुम्हें इन फलों के जन्म की कहानी सुनाएँ ।

श्री रामचन्द्र जी के राजतिलक के समय दूर-दूर के देशों से बहुत से सामन्त-सरदार, बन्धु-बान्धव, दोस्त-मित्र और भक्त-प्रेमी आए। वे लोग राजा राम को भेंट देने के लिए अपने साथ कुछ ना कुछ लेते आए। बन्दरों के राजा सुग्रीव, राक्षसों के राजा विभीषण, देवताओं के राजा इन्द्र सभी लोग भेंट देने के लिए अपने साथ बेश कीमती मोती और हीरे जवाहर ले आए थे। बड़े-बड़े ज्ञानी और भक्त लोग भी अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ न कुछ लेते ही आए।

लेकिन हनुमान जी को न सुझा कि वह अपनी स्वामी को क्या भेंट करें। वह कोई निश्चय न कर सके। उन्होंने सोचा -"मैं कोई ऐसी चीज भेंट करूँ जो रामचन्द्र जी को बहुत प्यारी हो और जो चीज कोई ना ला सका हो।" लेकिन दुनिया भर में लोग आते आते दुनिया भर की चीज ले आए थे। हनुमान जी चक्कर में पड़ गए कि अब वह कौन सी चीज लाकर राम जी को भेंट करें। कल ही तिलक होने वाला था। हाथ पैर हाथ धरे बैठे रहने से काम नहीं चलने का। साहसा हनुमान जी को एक उपाय सूझ गया। बस, वह कमर कस कर तैयार हो गए और आसमान में उड़ते हुए सीधे ब्रह्मलोक पहुँच कर ब्रह्मा जी के पास जा खड़े हो गए। हनुमान जी को

तरह असमय में आया देख कर ब्रह्मा जी घबरा गए। वे सोचने लगे कि आज न जाने कौन सी आफत सिर पर आने वाली है ! उन्होंने उठकर हनुमान जी की खातिर की और एक अच्छा सा आसन देकर बैठने के लिए कहा। लेकिन नहीं ! हनुमान जी खड़े-खड़े बातें करने लगे -"मैं एक जरूरी काम से आया हूँ। कल रामचन्द्र जी का राजतिलक होने वाला है। इस शुभ अवसर पर सीताराम की भेंट करने के लिए मुझे दो ऐसी चीज चाहिए जिन्हें देखते ही वह खुश हो जाएँ। जब तक आप ऐसी दो बस्तुएँ रच कर मेरे हाथ में न दे देंगे तब तक मैं आपका पिन्ड नहीं छोड़ूँगा।" हनुमान जी ने कहा। विधाता अच्छी तरह जानते थे कि हनुमान जी अपनी धुन के पक्के हैं। अपने हठ के लिए प्राणों तक की बाजी लगा देने वाले आदमी हैं। इसलिए उन्होंने अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए दो ऐसे फल बनाए जो अब तक उनकी सृष्टि में नहीं थे। उन्होंने उनका नाम सीताफल और रामफल रखा। फिर उन्होंने वह दोनों फल हनुमान जी के हाथ में रखकर कहा -"जाओ , इन्हें ले जाकर रामचन्द्र जी को भेंट करो। वह तुम पर बहुत खुश होंगे।" हनुमान जी वे दोनों फल लेकर तुरन्त वहाँ से लौट पड़े।

राजतिलक का समय आया। पर हनुमान जी का कहीं पता न था। श्री रामचन्द्र जी

सोच में पड़ गए। उन्हें हनुमान जी से जितना प्रेम था, उतना और किसी से न था। जब हनुमान जी न दिख पड़े तो उनके आनन्द पर पाला पड़ गया। उन्होंने सोचा -"शायद हनुमान किसी कारण रूठ कर कहीं छिप रहा है। "

इसी समय दरबार में खलबली मची और शोर हुआ -"हनुमान जी आ गए ! हनुमान जी आ गए !" हनुमान जी भीड़ को चीरते तीर की तरह आगे बढ़े और रामचन्द्र जी के पैर छूकर दोनों फल उनके सामने रखकर बोले -"स्वामी ! मैं आपके लिए यह दो फल लाया हूँ। इनमें एक का नाम है सीताफल और दूसरे का रामफल।" रामचन्द्र जी ने हनुमान को उठाकर गले लगाया और पूछा - "ऐसे फल तो हमने अब तक नहीं देखे थे। बताओ तुम कहाँ गए थे और कहाँ से यह फल ले आए हो। " हनुमान जी ने सारा हाल कह सुनाया।

सुनकर रामचन्द्र जी के साथ सभी लोग दाँतों तले ऊँगली दबाने लगे। उन्होंने कहा -"हनुमान जी जैसा भक्त और धुन का पक्का आदमी कहीं नहीं मिल सकता।" रामचन्द्र जी ने यह दोनों फल तोड़कर सारी सभा में बाँट दिया। लोग उन फलों को चखकर कहने लगे कि ऐसे मीठे फल उन्होंने कभी नहीं खाए थे। राम और सीता बहुत प्रसन्न हुए। लोगों ने हनुमान की यादगार में उन फलों के बीज ले जाकर बगीचों में लगा दिए; जिसमें पौधे उगे,बड़े हुए और फूले फले।

लोग उस दिन से आज तक बड़े प्रेम से सीताफल और रामफल खाते आए हैं। उन फलों में हनुमान जी की स्वामी भक्ति की मिठास भरी हुई है।

बच्चों ! वह फल खाते वक्त क्या तुमने कभी हनुमान जी को याद किया है ? अगर नहीं किया है तो आगे से जरूर करना।

सैंकड़ों बरस पहले किसी गाँव में एक जमींदार रहता था। वह बड़ा धनी आदमी था। उसके पास हजारों बीघे जमीन थी। लेकिन वह बड़ा कञ्जूस और मक्खीचूस था। उसके नौकर-चाकरों को भरपेट खाना तक नसीब न होता था। भला ऐसे कञ्जूस के पास कौन नौकरी करता ! अगर कोई भूला भटका बेवकूफ आ भी जाता तो दस-पन्द्रह दिन में ऐसा चम्पत हो जाता कि किसी को कानों कान खबर तक न होती। फिर जमीदार के हजार बीघों की खेती कौन करता ? यों उसके हजारों बीघों में घास फूस उग आई और गाँव के गाय बैल उसमे मजे से चलने लगे।

संयोग से एक दिन एक साधु उसे जमींदार के घर आए। जमींदार ने उन साधु से अपना दुखड़ा रोकर कह सुनाया। सुनकर साधु को उस पर दया आई और उन्होंने जमीदार को एक मन्त्र बता दिया। साधु के चले जाने के बाद जमींदार ने एक आसन पर बैठकर उसे मन्त्र का जाप किया। पलक झपकते ही उसके सामने एक राक्षस आ खड़ा हुआ और कहने लगा -"बोलो ! क्या चाहते हो ?" जमींदार पहले तो डर गया, पर किसी तरह बोला -"अच्छा ! क्या तुम मेरा कुछ काम कर दोगे?"

"जरूर कर दूँगा।" राक्षस ने कहा।

"पर तुम्हें मुफ्त में करना होगा। मैं पहले ही कह देता हूँ। " उसे कञ्जूस ने कहा।

"कोई परवाह नहीं।" राक्षस ने कहा।

जमींदार बड़ा खुश हुआ कि मुफ्त में एक नौकर मिला। उसने हुक्म दिया -"तुरन्त मेरे हजारों बीघे जमीन जोत आओ। " यह हुकुम देकर वह खाना खाने गया। इतने में राक्षस ने आकर कहा -"जमीन जोत आया। "

"क्या ? सरा खेत जोत लिया ? हजारों बीघे ?" जमींदार ने कहा ।

"हाँ , सारा खेत जोत आया। " राक्षस ने कहा। जमीदार मन ही मन डर गया। पर मुँह पर बनावटी गुस्सा लाकर बोला -"तुमने खेत जोतने में इतनी देर क्यों लगाई ?"

"माफ कीजिए। आगे से ऐसा न होगा। " राक्षस ने कहा।

"अच्छा, जाओ। जल्दी से खेत सिञ्च कर निरा देना। " जमींदार ने कहा।

जमींदार खाना खाने के लिए आसन पर बैठा ही था कि इतने में राक्षस लौट आया और बोला -"सिञ्चाीई निराई हो गई। आप बोलिए -मैं क्या करूँ ?"

"नहीं, नहीं। एक बार निराने से कुछ नहीं होता। इस काली चिकनी मिट्टी को तीन-चार बार निराना पड़ता है। " जमींदार ने कहा।

जमींदार का खाना अभी पूरा भी नहीं हुआ था कि राक्षस फिर लौट आया और बोला -"तुमने जो कहा था सो तो पूरा हो गया। कहो अब क्या करूँ ?"

जमींदार ने घबराते हुए जल्दी-जल्दी कहा -"जाओ , सारे खेत को बो आओ। मैं अभी आकर देखता हूं कि तुम सचमुच कम कर रहे हो या सिर्फ बातें बना रहे हो। "

जमींदार खाना खाकर कुल्ला ही कर ही रहा था कि राक्षस लौट आया और बोला-"बोना हो गया। अब क्या करूँ?"

"सचमुछ बो आए हो ? चलो, मैं अभी तुम्हारे साथ चलता हूँ।" यह कहकर जमीदार उसके साथ चला। जाकर देखा तो सारा खेत बोया हुआ था। अब उसका दिल जोर से धड़कने लगा और हाथ पैर थर्राने लगे। उसे न सुझा कि ऐसे नौकर को कैसा काम दिया जाए। उसने सर खुजलाते हुए कहा -"अच्छा, देखो सारे खेत में एक-एक बीघे की नई

मेड़ें बनाकर घर आ जाना और देखो मेड़ें बनाने में इतनी जल्दी करने की कोई जरूरत नहीं। " यह कहकर वह बेहताशा दौड़ता दौड़ता घर जा पहुँचा और सीधे रसोई घर में आकर पत्नी से बोला -"बोलो , अब क्या किया जाए ? साल भर का काम राक्षस ने एक घण्टे में कर दिया। जब मैं उसे कोई काम न दे सकूँगा, तो वह मुझे खो जाएगा। वह अभी आता ही होगा।" जमीदार ने रूआँसा होकर कहा।

कोई चिन्ता नहीं। जब वह आ जाए, तो एक बार मेरे पास भेज देना। " उसकी पत्नी ने लापरवाही के साथ कहा।

पाँच मिनट में राक्षस वापस आ गया। जमींदार ने उसे अपनी पत्नी के पास भेज दिया। जमींदार की पत्नी ने पहले तो राक्षस से घर का सारा काम करवा लिया। फिर अपने सिर का एक घुँघराले केश उसके हाथ में देकर कहा -"देखो, इसकी एँठ निकालकर सीधा करके मेरे पास लाना। "
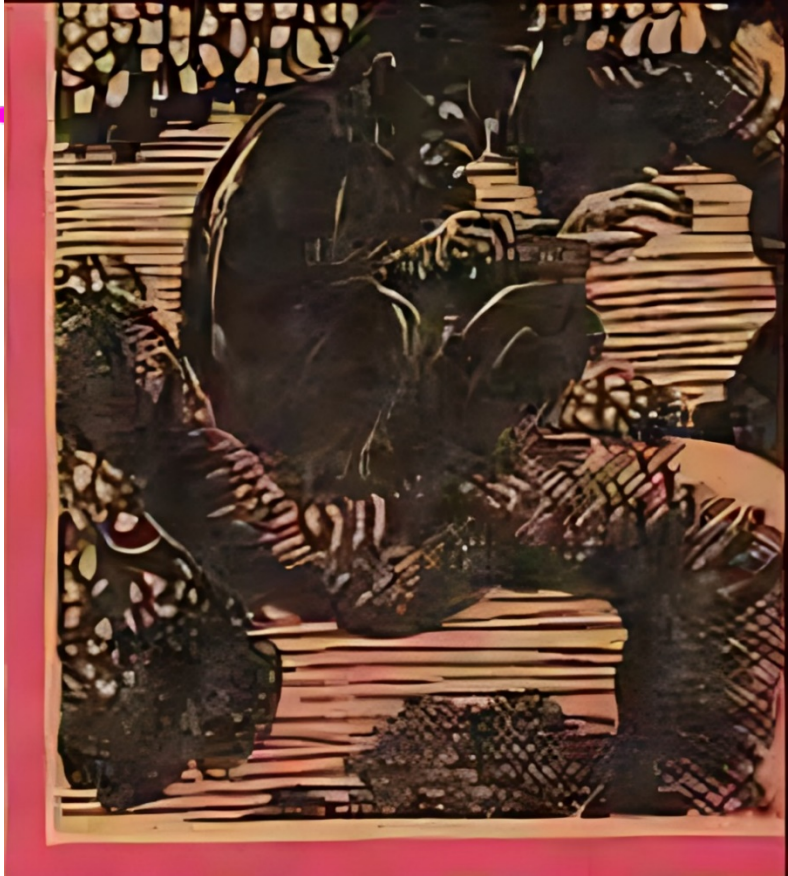
राक्षस वह केश लेकर सीधा करने के लिए बाड़ी में गया। लेकिन दिन बीत गए, हफ्ते बीत गए तो भी वह केश सीधा न हुआ। जमींदार जो काम चाहता, राक्षस से करवा लेता और फुर्सत के वक्त वह केश राक्षस के हाथ दे देता। आखिर राक्षस भी ऊब गया और उस केश को सीधा करने का उपाय ढूँढ़ते हुए गली-गली घूमने लगा। एक दिन उसने देखा कि एक लौहार लोहे की एक छड़ आग में गर्म करके हथौड़े से सीधा कर रहा है। बस अब क्या था ! वह दौड़ा-दौड़ा एक अङ्गीठी के पास गया और वह केश आग में डाल दिया। केश जलकर खाक हो गया और उसके साथ-साथ राक्षस भी।

इसके कुछ ही दिन बाद वर्धमान को राजधानी में घूम फिर कर देखने की इजाजत मिल गई। मानवी पर्वत के आने की खबर सुनते ही सब लोग घरों में जाकर घुसे। पर बहुत से लोग इसे देखने के लिए महलों की छतों पर भी जा चढे। उस शहर के बीचो-बीच राजा का महल था जिसके चारों तरफ ऊँची चारदिवारी थी। वर्धमान वह दीवार लाँघ कर आसानी से अहाते में पहुँचा। पर राजमहल के अन्दर की सजावट, बेल-बूटे और चित्रकारी बगैरह वह जमीन पर लेट कर खिड़कियों से ही देख सका।

राजा ने उसकी बड़ी आव-भगत की। वर्धमान को इससे बहुत खुशी हुई। वह सोचने लगा कि उनका एहसान चुकाने का कोई मौका मिले तो बहुत अच्छा हो। थोड़े दिनों में उसे ऐसा मौका भी मिल गया।

बौनों के टापू से थोड़ी ही दूर पर और एक छोटा सा टापू था। वहाँ के लोग भी देखने में बिल्कुल बौनों के जैसे ही थे। वह टापू "नन्हा टापू" कहलाता था और वहाँ के निवासी नन्हे। बौनों और नन्हों में न जाने कितने दिनों से लड़ाई चली आ रही थी। अभी कुछ वर्षों से दोनों के बीच ऊपरी शान्ति विराज रही थी। लेकिन नन्हों का राजा चुपके-चुपके लड़ाई की तैयारी कर रहा था। वह बौनों के टापू पर चढ़ाई करने के लिए बहुत से जङ्गी जहाज बनवा रहा था। बौने राजा को अपने गुप्तचरों द्वारा मालूम हो गया कि यह जङ्गी जहाज अब पूरी तरह

तैयार हो गए हैं और नन्हे उन पर चढ़कर चढ़ाई करने ही वाले हैं। बस, राजा ने तुरन्त वर्धमान को बुलाया और उसकी मदद माँगी। तब वर्तमान ने कहा -"मेरे लिए इससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है ! लेकिन पहले मुझे कुछ चीज चाहिए। उन चीजों के मिलते ही मैं कुछ तैयारी कर लूँगा और फिर नन्हों के सब जहाज पकड़कर आपके हवाले कर दूँगा। यह सुनकर राजा को बहुत खुशी हुई। उसने हुक्म दिया कि वर्तमान जो जो चीज चाहे तुरन्त ला दी जाए। वर्धमान ने एक बड़ा मोटा रस्सा और लोहे की कुछ मोटी-मोटी छड़ें माँगी। पर बौनों के पास जो रस्से थे वे हमारे सूत के धागे से ज्यादा मोटे न थे। उनकी लोहे की छड़ें हमारी छोटी-छोटी कीलों से बड़ी न थी।

बेचारे वर्तमान को किसी न किसी तरह इन्हीं से काम चलाना पड़ा। उसको जो रस्सियाँ मिली, उन्हें फिर से तिगुनी वाण्ट कर उसने एक मजबूत रस्सी तैयार कर ली। ऐसी ऐसी पचास रस्सियाँ वाण्ट ली। फिर

उसने तीन-तीन छड़ों को मिलाकर झुका लिया और इस तरह के पचास फाँटे तैयार कर लिए। फिर एक-एक रस्सी से एक-एक फाँटा को बाँधा और उन्हें अपने कन्धे पर लटकाए वह उस ओर चला जहाँ समुद्र के किनारे नन्हों के जङ्गी बेड़े लङ्गर डाले खड़े थे।

बौनों और नन्हों के टापूओं के बीच से एक नहर गई थी जो दोनों टापू को अलग करती थी। वह नहर सात-आठ फीट से कहीं ज्यादा गहरी न थी। वर्धमान को दूर से ही नन्हों के जङ्गी बेड़े दिखाई दे रहे थे। कुल मिलाकर पचास जङ्गी जहाज और कुछ छोटी-मोटी नावें थी। वह पानी में उतरकर उनकी ओर बढ़ने लगा।

बौने राजा और उनके सब दरबारी किनारे पर खड़े-खड़े देख रहे थे कि वह अब क्या करने वाला है ! जहाज पर के नन्हे लोग अपने-अपने काम में मशगूल थे। उन्हें क्या पता कि उनके सिर पर ही पहाड़ टूट कर गिरने वाला है ! उन्हें इस मानवी पर्वत के बारे में बिल्कुल मालूम नहीं था।

वर्धमान को मझदार में थोड़ी दूर तक तैरना पड़ा। लेकिन जल्दी ही उसके पैर थाह में आ गए। वह जल्दी-जल्दी बेड़े की ओर चला। उसके चलने से पानी में जो उथल-पुथल पैदा हुई, उसे देखकर नन्हों के भय और आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कुछ लोग तो खड़े-खड़े मुँह बाए देखते रह गए। पर कुछ लोग जान लेकर भाग निकले। अब वर्धमान ने ज्यादा देर न की। झटपट उन जहाज़ों को अपनी कौटियों से कसकर बाँध लिया और सब रस्सियाँ मिलाकर एक गाँठ बना ली।

किनारे पर के नन्हे लोग उस पर तीरों की बौछार कर रहे थे। उन तीरों के लगने से वर्धमान को और कोई कष्ट तो न था, लेकिन आँखें फूट जाने का डर जरूर था। इसलिए वर्धमान ने एक उपाय किया। आते वक्त उसने जेब में एक चश्मा रख छोड़ा था। अब उसे निकालकर लगा लिया।

लेकिन एक और अड़चन उठ खड़ी हुई। नन्हों के सभी जहाज लङ्गर डाले खड़े थे। अब इन लङ्गरों को खोलने के लिए वर्धमान के पास काफी समय न था। इसलिए वर्धमान ने चाकू से उन सब लङ्गरों के रस्से काट डाले। यह देखकर नन्हे लोग और भी घबरा गए। वे और भी फुर्ती से वर्धमान पर तीर बरसने लगे। लेकिन वर्धमान ने इसकी कोई परवाह न कि। वह रस्सियाँ पकड़कर दुश्मन के उन पचास जहाज को खींच ले चला।

किनारे पर पहुँचते ही बौनों ने जोर से नारे लगाए - "बामन महाराज की जय ! मानवी पर्वत की जय !" महाराज बड़े

प्रसन्न हुए और उन्होंने वर्धमान को एक लम्बा-चौड़ा खिताब दे डाला।

लेकिन इस तरह राजा का सम्मान-पात्र बनना वर्धमान के हक में अच्छा न हुआ। राजा ने सोचा -जब वर्धमान ने इतना बड़ा काम कर दिखाया, तो वह और क्या नहीं कर सकता है ? अब उसके लालच का ठिकाना न रहा। उसने वर्धमान को आज्ञा दी - "तुम तुरन्त जाकर नन्हों के बचे-खुचे जहाज और नावें पकड़ लाओ। इतना ही नहीं, उनका नामोनिशान ही मिटा दो ,तभी हम उस देश पर कब्जा कर सकेंगे और मैं विश्व-विजयी कहला सकूँगा।"

लेकिन वर्धमान ने सोचा -"यह तो बड़ी बेइन्साफी है। मुझे से यह कभी नहीं हो सकता।" इसलिए उसने राजा को सलाह दी कि नन्हों से सुलह कर लेना ही उचित है। उन्हें और नीचा दिखाना अच्छा नहीं।

नन्हों के दूत सुलह की बातचीत करने आए, तो उन्होंने सुना की वर्धमान उनका पक्ष ले रहा है और

उनके पति न्याय करने की कोशिश कर रहा है। तुरन्त उन्होंने वर्धमान के दर्शन किए और उसकी वीरता और उदारता की प्रशंसा करते हुए कहा -"आप एक बार जरूर हमारे देश में पधारिए। हमारे राजा साहब आपसे मिलकर बहुत खुश होंगे।" वर्धमान ने जवाब दिया कि उसने भी नन्हों के राजा की बड़ी बड़ाई सुनी है और अपने देश लौट जाने से पहले वह जरूर उनसे मिलने की कोशिश करेगा। उसने इन दूतों से अनुरोध किया कि वे

कृपा करके नन्हे महाराज को उसका सादर नमस्कार कहें।

वर्धमान के अड़ जाने के कारण बौने महाराज को सुलह कर लेनी पड़ी। लेकिन उन्हें वर्धमान पर बड़ा क्रोध आया और अब चुगलखोरों को राजा के कान भरने का अच्छा मौका मिला।

सैलानी वर्धमान ने नन्हों का देश देखने का निश्चय किया और बौने महाराज से इजाजत माँगी। राजा ने बड़ी मुश्किल से इजाजत तो दी। लेकिन गुपचुप वह वर्धमान को मरवाने की तैयारी करने लगा। वर्धमान के कानों में जब इसकी भनक पड़ी, तो पहले उसे विश्वास न हुआ। लेकिन पूछताछ से मालूम हो गया कि खबर पक्की है। अब उसने समझ लिया कि देर करने से जान का खतरा है। इसलिए वह रातों-रात भाग कर नन्हों के देश में जा पहुँचा और नन्हे राजा की शरण में चला गया।

वह वहाँ कुछ दिन तक बड़े आराम से रहा। अचानक एक दिन एक भूला-भटका जहाज उस तट पर जा लगा। उसको देखते ही वर्धमान ने स्वदेश लौटने का निश्चय कर लिया।

नन्हों ने अनेक इनाम-इकराम देकर उन्हें बड़े प्रेम से विदा किया। चन्द दिनों के बाद वर्धमान को अपने देश की मिट्टी पर पाँव रखने का मौका मिला। सब लोग खासकर बच्चे उसकी यात्रा की कहानी सुनकर अचरज में पड़ गए। धीरे-धीरे चारों तरफ उसकी शोहरत फैल गई। [संशेष]